मथुरादास की डायरी • मुद्राराक्षस

जगतराम एण्ड सन्स
मेन बाज़ार, गांधी नगर, दिल्ली-110031

© मुद्राराक्षस

प्रकाशक
जगतराम एण्ड संस
IX/221, मेन बाजार, गांधीनगर
दिल्ली-110031

प्रथम संस्करण
1992

मूल्य
पचास रुपये

मुद्रक
अजय प्रिंटर्स
नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

MATHURADAS KI DIARY (Humour & Stire)
by Mudrarakshas
Price : Rs. 50.00

अनुक्रम

परनिंदा सुख उर्फ एरिस्ट्रोक्रेट झाड़ू	7
पुरस्कार प्रसंग	10
सावधान ! आगे जनवादी रेजीमेंट है	14
अध्यक्षता का आनन्द	19
अथ श्री दिल्ली पुलिस पुराणम्	23
काशी विश्वनाथ : शासकीय नियमावली	27
विधायक बिकाऊ हैं···!	32
आलोचना के खतरे	37
ऋणंकृत्वा चर्बी पिवेत	41
पड़ता सिद्धान्त	46
चुनाव चक्र और एकता	51
उत्तर प्रदेश का कीर्तिमान	55
व्यंग्यकार की मेख	59
गरीबी की रेखा के इधर और उधर	64
समीक्षा सुख	68
टेढ़ा उल्लू	72
बड़ा क्या है : सच्चा सुख या सत्ता सुख	77
हिन्दी की शुभचिन्तक	82
ब्लेड युग की साहित्यिक हरकतें	87
बड़े बनने का गुर !	91
भारत भवन से मथुरादास की अपील	96
कम्प्यूटर क्रान्ति	101
उपदेशक की जमीन	105

आत्मवचन होता है। जनवादी ब्रिगेड का झण्डा थोड़ा गोपनीय है। झण्डा फहराया तो जाता है, मगर गोष्ठी शुरू होने से पहले उतार लिया जाता है। बाद में ब्रिगेड सिर्फ डण्डे से काम चलाता है। आत्मवचन 'गैंग ऑव फोर' का फैसला होने तक अभी अनिश्चित है। 'गैंग ऑव फोर' वो बीजिंग वाला नहीं, हिन्दुस्तान वाला यानी—खैर छोड़िए। हमें क्या लेना-देना ! वैसे आप अपनी सुविधा और संभावनाएँ देखकर अगर जनवादी रेजीमेंट में भर्ती होना चाहें तो अभी वक्त है।

अध्यक्षता का आनन्द

मित्रो, देश की हालत बहुत खराब है। अवधनारायण मुद्गल अध्यक्षता करने लगे हैं। किसी जमाने में भारतेन्दु भारत-दुर्दशा से बहुत दुखी हुए थे। मैं उनसे कुछ ज्यादा ही दुखी हूँ। आखिर लोगों को यह क्या होता जा रहा है ? अच्छा-भला आदमी देखते-देखते कब यकायक आपके बीच से उठेगा और किंचित मुदित, गौरवांदोलित पदन्यास के साथ जाकर अध्यक्ष की कुर्सी पर बैठ जायगा, आप नहीं जान सकते।

अध्यक्ष की कुर्सी पर बैठकर वह सबसे पहले यह कहेगा कि वह इस पद के योग्य नहीं है; किन्तु दूसरे को अपने फैसले पर पुनर्विचार करने का अवसर दिये बगैर कुर्सी पर इस तरह धँसेगा जैसे अध्यक्ष के अलावा वह कभी कुछ बना ही नहीं।

मेरा खयाल है कि इस विषय में कुछ शोधकार्य होना चाहिए। विश्व-विद्यालयों को चाहिए कि वे कवि पन्त में नारी भाव और प्रेमचंद का चरित्र-चित्रण जैसे विषयों के बजाय अब कुछ इस तरह के विषयों पर अनुसन्धान करें जैसे 'भारतीय राजनीति में अध्यक्षता रोग के विषाणु', 'हिन्दी साहित्य में अध्यक्ष परम्परा', 'अध्यक्षता : एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन' आदि।

मैंने कुछ अध्यक्षता के रोगी देखे हैं। उनकी हालत बड़ी खराब होती है। मादक द्रव्य लेने वाले से कम बुरी हालत नहीं होती। ज्यादा दिन बिना अध्यक्षता के रहना पड़े तो आदमी बुझा-बुझा, कुछ सूखा-सा और हताश दिखने लगता है। मुहल्ले के सत्संग की ही अध्यक्षता ऐसे वक्त में मिल जाय तो चेहरे पर रंगत आ जाती है। अक्सर वे मुहल्ला सुधार समिति की अध्यक्षता करके भी आनन्दित हो लेते हैं। यह अध्यक्षता सुख ऐसा दिव्य सुख है कि इसके लिए लोग पर्याप्त धनराशि भी खर्च करने में हिचकते नहीं। कभी-कभी वे समूचे आयोजन का खर्च सिर्फ इसलिए बड़ी उदारता

से उठाते हैं कि उन्हें अध्यक्ष बनने की उम्मीद होती है। शोहदे किस्म के लोग अक्सर ऐसे लोगों की तलाश में रहते हैं और उन्हें जगह-जगह इसलिए भी अध्यक्षता की कुर्सी पर बैठा देते हैं कि इस प्रकार वे अध्यक्ष बनने वाले से पर्याप्त धन वसूल कर सकें।

जब से साहित्य के उत्पादन में वृद्धि हुई है और रचना जगत् में लेखन-क्रान्ति आई है, हमें प्रकाशन योग्य स्थान की भारी कमी महसूस होने लगी है। अपने अमूल्य साहित्य को काल कवलित होने से बचाने के लिए बड़े पापड़ बेलने होते हैं। ऐसे में संपादक खासे माले गनमीमत साबित होते हैं। उन्हें अध्यक्ष बनाने के बाद मथुरादास की डायरी छपनी थोड़ी आसान हो जाती है। मैं तो एक संपादक ऐसा भी जानता हूँ जो कुछ लेखकों को साग्रह सिर्फ इसीलिए छाप रहा है कि वे लेखक गोष्ठियों, सम्मेलनों के भारी आयोजन करते रहते हैं और कभी तो ऐसा मौका आएगा ही जब अध्यक्षता के लिए मन्त्री अथवा विभागाध्यक्ष उपलब्ध न होने पर संपादक को बुलाया जाएगा। हालाँकि वहाँ भी उसका स्थान बहुत सुरक्षित नहीं है। अभी तक पत्रकार अध्यक्षों में कन्हैयालाल नन्दन ही थे, पर अब अवधनारायण मुद्गल के भी इधर आ जाने से उगकी हालत बहुत अच्छी नहीं है।

संपादकों ने इस क्षेत्र में अवैध कब्जा अब शुरू किया है वरना साहित्य में यह अधिकार वयोवृद्धों को प्राप्त है। बूढ़े हो जाने पर अक्सर लेखक अनाप-शनाप बोलने लगता है और इस तरह लेखक समाज में निन्दा का पात्र हो जाता है। इससे बचने का सबसे सुरक्षित स्थान अध्यक्ष की कुर्सी होता है। आप देखेंगे किसी सभा में दो वृद्ध लेखक एक साथ कभी नहीं जाते, क्योंकि अध्यक्ष पद हमेशा एक होता है। एक उम्र के बाद लेखक के पाँव बिना बुलाये भी मंच के बीच की कुर्सी की तरफ उठने लगते हैं। वह मंच के कोने में रखे हार के दोने से यह अन्दाज भी लगा लेता है कि वह उसे पहनकर कितनी शोभा पायेगा। हार पहनाये जाते वक्त उसे रोकते-रोकते भी तब तक गले में डाले रहता है जब तक फोटो न खिंच जाए। फोटो खिंचने के बाद हार उतारकर सामने मेज पर रख लिया जाए तो सभा में देर से आने वाले को भी पता लग सकता है कि अध्यक्ष कौन है। हार के बिना अध्यक्षता का स्वाद आधा रह जाता है।

अध्यक्ष पद मिले तो वक्तव्य में बड़ी सुविधा हो जाती है। एक बार रंगकर्मियों की एक सभा की अध्यक्षता करते हुए अध्यक्ष महोदय ने बाल साहित्य की आवश्यकता पर भाषण दे डाला। तालियाँ फिर भी बजीं। एक और साहब रूमानिया के सांस्कृतिक कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए रोम के जूलियस सीजर की प्रशंसा करते रहे। तालियाँ तब भी बजीं। एक और अध्यक्ष महोदय इन सबसे आगे निकल गए। एक शोक-सभा की अध्यक्षता का भार उन्हें सौंपा गया तो अपने भाषण में उन्होंने कहा—यह मेरे लिए हर्ष और गौरव की बात है कि इस शुभ अवसर पर आपने मुझे सम्मानित किया। और इसके बाद अध्यक्षजी ने अपनी कुछ ताजी लिखी कविताएँ भी सुना दीं।

बड़ी-बड़ी उपाधियाँ मिल जाएँ, ऊँचा पद हो, पर अध्यक्षता का अवसर हाथ न आए तो सब फीका-फीका लगता है। शास्त्रों में इसीलिए ब्रह्मानन्द के साथ दूसरा आनन्द अध्यक्षतानन्द ही माना गया है। जिस तरह ब्रह्मानन्द के लिए यह जरूरी नहीं है कि आदमी मन्दिर में बैठे ही, वैसे ही अध्यक्षता-नन्द के लिए भी कुर्सी जरूरी नहीं मानी है। यानी सभा हो न हो, अध्यक्षता दी जाए या न दी जाए, आदमी चाहे तो घर बैठे अध्यक्षता का आनन्द उठाए। आप पण्डित श्रीनारायण चतुर्वेदी को देखिए। किसी भी कार्य के लिए बैठे हों, अध्यक्षतानन्द मुद्रा में ही दिखेंगे।

अध्यक्षता के इस आनन्द को वही जान सकता है जो अध्यक्ष बन गया और उस कुर्सी से न उतरने की कसम खा चुका है। चन्द्रशेखर चार हजार किलोमीटर घिसटते हुए पाँव छलनी कर सकते हैं पर अध्यक्षता का मोह नहीं छूटता। चरणसिंह को अध्यक्षता का बिल्कुल मोह नहीं है। वे इस कुर्सी को छोड़ने के लिए सदा तैयार रहे हैं; पर कुर्सी उन्हें नहीं छोड़ती। इस झंझट में भारी गड़बड़ी फैल रही है। वे हर पार्टी से मेल-मिलाप को तैयार हैं लेकिन अपनी कुर्सी सहित। बिना कुर्सी उनका व्यक्तित्व गड़बड़ा जाता है। जगजीवन बाबू की हालत बिल्कुल अलग है। वे कुर्सी बिना बैठ नहीं सकते. लेकिन जिस कुर्सी पर बैठते हैं वही टूट गिरती है। राजनारायण इस बीच विचित्र हरकतें करते रहे हैं। वे न खुद कुर्सी पर बैठते हैं न दूसरे को बैठने देते हैं।

इस मामले में कमलापति त्रिपाठी बहुत विशालहृदय हैं। किसी भी शब्द के साथ अध्यक्ष जोड़ दीजिए उनका काम चल जाएगा, फिर आपको न सभा जुटाने की जरूरत है न सभाकक्ष। वे हेमवतीनन्दन बहुगुणा की तरह चमका देने में बिल्कुल यकीन नहीं करते। बहुगुणा बहुत गुणी हैं। वे खड़े-खड़े भी अध्यक्षता कर लेते हैं। वह भी न हो तो चलते-फिरते अध्यक्षता करते रहते हैं।

इनमें सबसे खतरनाक अध्यक्ष अटल बिहारी बाजपेयी हैं। अध्यक्ष कोई भी हो, भाषण वही देंगे। कुर्सी पर कोई हो, माला पर अधिकार उनका होगा। मगर माला बाकायदा माला होनी चाहिए। शरद पवार की बात अलग है जो माला के धागे से भी काम चला लेते हैं।

कुछ अलग किस्म के अध्यक्ष भी होते हैं। स्वागताध्यक्ष। ये अध्यक्ष जरूर होते हैं लेकिन अध्यक्षता करते कभी नहीं हैं। अक्सर उनके बारे में या उनके वहाँ होने के बारे में सभी को कुछ भी पता नहीं होता। उनके अस्तित्व का पता या तो स्मारिका के संपादक को होता है या फिर संस्था के खजांची को। एक निश्चित राशि चंदे की देकर यह अध्यक्षता खरीदी जाती है और खरीद कर डाल दी जाती है। मैं एक ऐसे पेशेवर स्वागताध्यक्ष को जानता हूँ जो एक बार सचमुच अध्यक्ष बना दिये गए थे। अध्यक्ष पद से भी उन्होंने स्वागत भाषण ही दिया था।

तो भाइयो, मैं बहुत चिन्तित हूँ कि जहाँ इस देश में अध्यक्षता की कला का इतना अच्छा विकास हो रहा है, वहाँ लोगों को क्या हुआ कि वे अवध-नारायण मुद्गल को अध्यक्ष बनाने पर उतर आए !

अथ श्री दिल्ली पुलिस पुराणम्

भगवान् विघ्नहरण को प्रणाम करने के उपरान्त नहाए-धोए तपोपुज सूतजी ने भक्तों से दिल्ली नाम नगर की प्रतापी पुलिस की लीला का वर्णन करते हुए इस प्रकार कहा—

अब तुम लोग जंबूद्वीप के देवताओं और गंधर्वों की नगरी दिल्ली में रहने वाले पुलिसजनों की अद्भुत लीला सुनो !

एक दिन नगर के श्रेष्ठजनों और महाजनों की बस्ती देवविहार में शस्त्रों से शोभित होते हुए कुछ डकैत आये और डकैतोचित सतर्कता बरतते हुए गलियों में ताक-झाँक करते लूटे जाने योग्य किसी उत्तम भवन को खोजने लगे।

इसी समय शुभ काम में अड़ंगा लगाने को उद्धत उसी बस्ती का एक चौकीदार उधर आ निकला और डकैतों को ललकारने लगा।

यह व्यक्ति भारी विपत्ति खड़ी कर सकता है—ऐसा सोचकर डाकुओं ने चौकीदार के सिर पर डंडा-प्रहार करके उसे बेहोश कर दिया।

उसे बेहोश करने के उपरान्त वे अनेक घरों में घुस-घुसकर डंडा-प्रहार द्वारा घर वालों का मस्तक-भंजन करते हुए आनन्दपूर्वक लूटपाट का सुख प्राप्त करने लगे। उस बस्ती में हाहाकार मच गया।

उधर चौकीदार को होश आया तो वह जल्दी से एक पड़ोस के घर पहुँचा और सारा हाल बताया। पड़ोसी ने तत्काल कोतवाल को फोन किया और कहा, 'श्रीमान कोतवाल साहब, हमारी बस्ती में कुछ डकैत आ गये हैं और वे भीषण लूटपाट मचाए हुए हैं। उन्होंने अनेकों के सिर फाड़ दिये हैं और कई लोग अपंग ही चुके हैं। इन डकैतों ने हमारे शान्तिप्रिय देवविहार में भयंकर उत्पात मचाया है।'

कोतवाल ने फोन पर उत्तर दिया, 'आप चिन्ता न करें। उस बस्ती में